chapter. 6

अध्याय - 6

उपसंहार

- गुप्तजी के नारी चित्रण का वैशिष्ट्य,
  उपादेयता तथा महत्व.

हिन्दी साहित्य जगत मे आजभी कविताएँ लिखी जाती है, उनके अपने माध्यम है और विषय है । प्राचीन युग से लिखी जाने वाली कविता के अपने रंग - एवम् माध्यम है । द्विवेदी युग के प्रतिनिधि कवि और आधुनिक युग में हिन्दी कविता के सुप्रसिद्व कवि मैथिलीशरण गुप्तकी की काव्य-प्रतिभा जन्मजान थी एवम् उनके काव्यगत संस्कार पैतृक देन थी । जब जन्मजात सृजनात्मक प्रतिमा होती है उसे केवल योग्य मार्गदर्शन की आवश्यकता रहती है क्यौंकि विना गुरु के ज्ञान प्राप्त नहीं होता । गुप्तजी को भी महावीर प्रसाद द्विवेदी जैसे महान विद्धान गुरु के रूप में प्राप्त हुए और उनके मार्गदर्शन से ही गुप्तकी कविताओं में सृजनात्मक वृत्ति प्राप्त कर सके । कविने अपने गुरुवर के निधन पर श्रद्धांजलि अर्पित करते हुए लिखा था- ''सींचा तुमने क्षेत्र हमारा आँसू नहीं पसीना गार, फूले-फ्ले अंत में अब वह पाकर उस शरीर का सार ।" (1) कवि ने लगभग साठ वर्षो तक अनवरत काव्य-साधना की और समाज को संस्कृति की ज्योति प्रदान की, उसे वास्तविक रुप देने का प्रयास किया है ।

राय कृष्णादासजी गुप्तजी के जीवन पर्यन्त साथी है । सन् 1911 में जब मैथिलीशरणजी कुर्री-सिदौली की यात्रा के प्रसंग में "भारत-भारती" के प्रकाशन के सम्बन्ध में वारासणी गये थे, उस समय का और उसके बाद मैथिलीशरणजी के व्यकितत्व का जो चित्र रायकृष्मदासजी ने मैथिलीशरण अभिनन्दन ग्रन्थ में खींचा है वह अनके भौतिक और मानसिक दोनों स्वरुपों का बडा सटीक विवरण है । उन्होंने लिखा- सन् 1911 ई मे, जब वह पहले पहल मेरे अतिथि होकर आये, तब बुन्देलंखन्डी वैश्यों की पगडी छकलिया अंगा, दुपट्टा और पायजामा यही उनका परिधान था । माथे पर सांप्रदायिक तिलक, बडी-बडी विचक्षण आँखें, मूंछे, साँवला रंग, इकहरा शरीर । स्वभाव की नम्रता उस समय भी प्रभावित किये बिना न रहती थी । बहुत दिनों तक यहा उनकी वेशभूषा रही, अंगे के साथ प्राय : धोती भी पहन लिया करते । फिर अंगे का स्थान कुरते ने किया, किन्तु दुपट्टा और पगडी ज्यों-त्यों-लों रही । सन् 1928 में जब से खादी ग्रहण की, तब से पगडी कुछ और भारी होने लगी, तभी कुछ समय के लिए दाढ़ी भी रख ली थी । सन् 1941 में उस गिरफ्तारी के बाद, जिसका कारण आज तक भी स्पष्ट नहीं हो सका है, उन्होंने पगडी का परिभाग कर दिया, तब से गांधी टोपी ही पहनते हैं, बीच बीच में अच्छा कुरता और जांधिवा पर ही रहजांते हैं । दाढ़ी मोछ अब साफ है । अपरिचित के लिए सहसा उन्हें देखकर ही यह कल्पना कर लेना असंभव है कि यह व्यक्ति वही मैथिलीशरण गुप्त है, जिसे काशी प्रसाद जायसवाल ने "द्विवेदी. युग की सबसे बडी देन कहा था और जिसका काव्य शरीर पिछली तिहाई शताब्दी के साहित्यिक कर्तव्य पर अविच्छिन्न रुप से छाया हुआ है ।"

प्रसिद्ध इतिहास डाक्टर मोतीचन्द्रजी, मैथिलीशरण गुप्तजी के अभिन्न मित्र है । उन्होंने मैथिळिशरणजी के प्रथम दर्शन और उसके बाद मैथिलीशरणजी के व्यक्तित्व के बारे में बड़े ही सजीव

संस्मरण लिखे । ''जिस दिन दद्दा से मेरी भेट हुई, उसी दिन से मेरे ने मुझे मानो संकेत कर दिया कि तुम इस महापुरुष में ऐसा अपनापन और ममत्व पाओगे जो और कहीं मिलने का नहीं । सुखमें, दु:खमें, आमोद-प्रमोद में तथा काव्य चर्चा में मैंने हिन्दी की इस महान विभूति का साथ किया है । उनके साथ बहस की है, हँसी की है, शायद कभी अति परिचय से उनकी अवज्ञा भी कर गया हूं, पर उन्होंने सर्वदा मुसे अपना प्रियतम सहोदर ही माना है तथा मुझे बराबर अपनी छत्रछाया में लेते रहे हैं । चिरगाँव तो मेरा दूसरा घर ही बन गया है । न जाने दद्दा के व्यकितत्व में कितना जादू है कि उन्हें कभी छोड़कर दूसरे काम में मन ही नहीं लगता । भाई सियाराम शरणजी कभी-कभी ज़रा बाहर चक्कर लगाने के लिए उकसाते हैं, पर दद्दाकी हंमेशा यही आवाज उठती है, डाक्टर, कहाँ जायेगे, यहीं बैठो, कुछ बातचीत होगी । चिरगाँव के ये दिन मुझे कभी भूलने के नहीं । इन दिनो ने मुझे मानवता का एक आदर्श सिखलाया है । अपने ऊपर वार होते हुए भी संवेदना न खोने की भावना मुझ में उत्पन्न की है तथा मुझ जैसे ढूंठ इतिहासकार में सच्चे काव्य के प्रति एक उत्साह पैदा किया है । हिन्दी के प्रति मेरे आकर्षण का कारण भी दद्दाही है । मुसे खेद है कि मैंने अपना साहित्यिक जीवन अंग्रेजी में लिखने से आरंभ किया । दद्दा मेरे अंग्रेजी के लेखों और पुस्तकों की तारीफ तो कर दिया करते थे, पर वे मुसे बराबर इस बात की प्रेरणा देते रहते थे कि मैं हिन्दी में भी लिखूं । मुसे हिन्दी में लिखवाने का दद्दा का इतना उत्साह कि मैं स्वयं उत्साहित होकर हिन्दी में लिखने लगा ।''

मित्रों के साथ गुप्तजीकी वाग्धारा खुल जाती है और काव्य कहानी से लेकर जीवन-समबन्धी छोटी-छोटी बातें उनसे नहीं छूट पातीं, पर अनजानो के सामने उनकी सरस्वती कुंठित हो जाती है । उनसे मिलने वालों का ताता तो बराबर लगा ही रहता । उनकी स्वाभाविक शालीनता ऐसी है कि वे किसी का दिल दुखाना जानते ही नहीं । उनकी कविता पर किसीने बहस की या प्रश्न पूछे तो उनका हंमेशा का उत्तर होता- अरे महाराज, दो चार तुकबंदियाँ लिख दीं, अब उन्हें समझना आप जैसे विद्धानों का काम है । अनेक बार तथाकथित समालोचकों ने उनकी कटु समालोचना की है - शायद उन्हें ठेस पहुँचाने की गरज से । ऐसी हरकतों से क्षणिक अवसाद होने पर भी, न तो वे अपने कर्तव्यपथ से ही च्युत हुए, न उन्होंने अपने आलोचकों का प्रतिभाव करने की कभी सोची । गुप्तजी का जीवन-दर्शन निम्मलिखित पंकितयों मे दिखाई देता है-

''जितने कष्ट-कंटको में है, जिनका जीवन-सुमन खिला ।
गौरव-गंध उन्हें उतना ही, अत्र तत्र सर्वत्र मिला ।''[2]

गुप्तजी अंत समय तक साहित्य स्वना में लगे रहे थे । गुप्तजी के मृत्यु के पश्चात उनके तकिए के नीच

एक कविता मिली थी, जो संभवत: उन्होंने उसी दिन लिखी थी । उस समय लग रहा था कि उन्हें अपने अंतकाल का आभास हो गया था । उसमे उन्होने कहा था :-

''प्राण न पागल हो तुम यों, पृथ्वी पर है वह प्रेम कहाँ ?
मोहमयी छलना भर है, भटको न अहो अब और यहाँ ।।
ऊपर को निरखो अब तो, मिलना बस है चिरमेल वहाँ ।
स्वर्ग वहीं, अपवर्ग वहीं, सुख-स्वर्ग वहीं, निजवर्ग जहाँ ।।"

आधुनिक काल नारी-जागरण का काल है । काव्य में नारी की समस्या को सामाजिक और सांस्कृतिक दोनों द्रष्टियों से देखा गया है । सामाजिक रुप में नारी जाति पर शताब्दियों से होने वाले शोषण, समाज व्यवस्था में उसकी गर्हित स्थिति की ओर ध्यान आकृष्ट किया गया है । भारतीय सांस्कृतिक पुर्न जाँगरण के वैचारिक आंदोलन का एक प्रमुख आयाम नारी जागरण के रुप में हुआ है । शताब्दियों से उपेक्षित - पीड़ितनारी को परिवार तथा समाज में उचित सम्मान प्राप्त हो, देशके विकास में उसका समान सहयोग हो। इस भावना से प्रेरित होकर नारियों से संबधित रुढियों को समाप्त करनेकी आवश्यकता महसूस की गयी । थिणे साकिक्ल सोसायटी, आर्य -समाज, ब्रह्म-समाज जैसे सांस्कृतिक आंदोलनों ने नारी जागरण के लिए प्रयत्न किये और नारी के गौरवशाली रूप की पुर्नस्थापना की । आधुनिकता बोध और पाश्चात्य सभ्यता के प्रभाव के परिणाम स्वरुप नारी के समानाधिकार मान्य किये गये । शिक्षा, व्यवसाय, नौकरी, परिवार, समाज, राजनीति, धर्म आदि सभी क्षेत्रो में नारी को पुरुष के बराबर का अधिकारी माना गया । रवीन्द्रनाथ ठाकुर ने 'काव्येर उपेक्षिता' निबंध द्वारा तथा द्विवेदीजीने सरस्वती के लेख लिखकर उपेक्षिता नारियों का उद्धार करने का आवाह्न किया । इन महानुभावों से प्रेरित होकर अनेक कवियों ने नायिका प्रधान का चित्रण कर उसके उत्कर्ष के प्रयत्न किये गये । नारी जागरण के क्षेत्र में गाँधीजी की विचारधारा का भी अत्यधिक महत्व है । पुरुष वर्ग ने अपने स्वार्थ के वशीभूत होकर नारी के घर की चहारदीवारी में कैद कर उसे समानता के अधिकारों से वंचित किया था । स्त्रियों की हीन-दीन अवस्था को देखकर गांधीजी बहुत व्यथित हुए क्योंकि वे नारी को अबला न मानकर लोकहित करनेवाली शक्ति के रुप में देखते थे । नारी विषयक उनके विचार द्रष्टव्य है : ''यदि स्त्री जाति अपने बल और अपने कार्यक्षेत्र की दिशा को भलीभांति समझ ले, तो वह अपने को कभी की आश्रित न माने और पुरुष का तथा उसके कार्यो का अनुसरण करना ही उसका आदर्श न बनें ।[3] गांजीजी की नारी जाति की गर्हित अवस्था से चिंतित थे इसलिए उन्होंने स्त्रियों को आत्मनिर्भर होने को कहा था - असल चीज तो यह है कि स्त्रियाँ निर्भय बनना सीख लें । मेरा यह दृढ़ विश्वास है कि कोई भी स्त्री जो निडर है और द्रढतापूर्वक यह

मानती है कि उसकी पवित्रता ही उसके सतीत्य की सर्वोतम ढाल है, उसका शील सर्वथा सुरक्षित है । ऐसी स्त्री के तेजमातृर से पशु-पुरुष चौंधिया जायेगा और लाज से गड़ जायेगा । [4] गांधीजीने नारी उद्धार के सिलसिले में वेश्या प्रथा, परदा प्रथा, बाल विवाह तथा सतीप्रथा की निंदा की और विधवा विवाह तथा अंतरजातीय विवाह का समर्थन किया था । इस प्रकार गांधीजी ने अस्पृश्यता उद्धार के साथ सामाजिक सुधारों में नारी को भी प्राथमिकता दी थी। गांधीयुग के समसामयिक कवियोंने अपनी स्वनाओं में नारी को गौखवाली रुप प्रदान किया है । नारियों के प्रति वह पूर्ण रुपसे न्यायशील एंवम् उदार है तथा धर्मो के अनुष्ठानिक पक्षों को अत्यंत गौण मानकर वह हृदयकी उस गहरी अनुभूति में विश्वास करती है जिससे सभी धर्मों का जन्म होता है।

स्वातंत्र्योत्तर काल मे नारी की जागृति अधिक हुई । नारी समस्या की और समाज का ध्यान गया। उस समय के समाज सुधारकों, नेताओं और राजनितिज्ञों ने नारी के उत्कर्ष पर अधिक बल दिया, क्योंकि समाजका आधा भाग अर्थात् नारी वर्ग अशिक्षित और कमजोर था । इसके लिए नारी शिक्षा पर जोर दिया गया । पाश्चात्य सभ्यता और अंग्रेजी शिक्षा के प्रसाद ने नारी-जागरण की भावना का विकास किया। नारी जागृति संबंधी आंदोलनों ने नारी में आत्मविश्वास एवम् समानता के भाव जगाये । इसके साथ काल मार्कस ने दर्शन से प्रभावित इस युग ने नारी को पुरुष के समान अधिकार प्रदान किये। प्रगतिवादी युग के कवि नारी अधिकारों के प्रति अधिक सजग थे । परवर्ती कवियों ने भी नारी को योगानुकूल प्रतिष्ठा प्रदान की । नारी के जननी, भार्या, गृहिणी, पत्नी, पुत्री, भगिनी इन रुपों में काव्य में स्थान दिया । आलोच्य काल में नारी की अस्मिता और शक्ति की भी पहचान हुई । नारी उत्कर्ष का यह सिलसिला आज तक बरकरार है ! आज तो नारी पुरुष के समकक्ष ही नहीं, कई क्षेत्रों में पुरुषों से भी आगे है । वर्तमान समय में सभी क्षेत्रों में नारीयाँ कार्यरत हैं । आलोच्ययुग नारी मुक्ति का युग होने के कारण समीक्ष्य कवियोंने ने नारी के प्रति उदारवादी द्रष्टिकोण अपनाया है, ताकि समाज और राष्ट्र का विकास हो सके । नारी विषयक इस भावना का प्रभाव आलोच्यकालीन महाभारताश्रित मिथक काव्यों पर पड़ा है । समीक्ष्य काल के अधिकांश कवियों ने नारी को गौरव प्रदान करने हेतु नायिका प्रधान प्रबंध काव्य लिखे हैं ।

कवि कृतित्य का आधार उसकी कृतियाँ होती है जिनके माध्यम से वह अपने आदर्शों और मन : स्वप्नों को मूर्त करता है । वह मन से कल्पना-जगत् और तन से यथार्थ जगतका प्राणी होता है । अत: दोनों विश्वों की अनुभूतियों को वह अपने हृदय के 'केनवास' पर भाव-तूलिका से रुपाचित करता है और यही चित्र पुंजीभूत हो होकर उसकी कृतियों के रुप में साहित्य जगत में विज्ञप्त होते हैं ।

नारीत्व के प्रति उच्चभावना के प्रमुख रुप में लेकर चलने वाले आधुनिक एवम् द्विवेदी युग के प्रमुख एव प्रतिनिधि कवि मैथिलीशरण गुप्त है । राजनीति, शिक्षा, अथवा आर्थिक क्षेत्र में नारी प्रतिभा में पुरुष से पीछे नहीं है। कवि में युगपरक जीवनदर्शन, समाजवादी , विचारधारा, मार्क्सदर्शन, गांधी दर्शन, लोहिया की नर-नारी समानता की द्रष्टि, नारी मुक्ति आंदोलन आदिने नारी चेतना को अनेक आयामों में व्यक्त किया हैं । उनकी कवितामें नारी का बहुत महान् स्वरुप प्रस्तुत हुआ है । इसके लिए उन्होंने मुख्य रुप से कवियों द्वारा उपेक्षित नारी को ही अपने काव्य में चित्रित किया है। उर्मिला, कैकेयी, यशोधरा, विधृता ऐसी ही नारी है । द्विवेदीयुगीन काव्यधारा में नारी भारतीय संस्कृति की मूर्ति है । इसलिए उसमें तपस्या, संयम, त्याग एवं आत्मोसर्ग की भावनाएं फूट-फूटकर भरी हैं । नारी चरित्रों को गौरवान्वित करके कविने नारी-जाति के उत्थान में सहयोग दिया है । नायिका-प्रधान काव्य की रचना करके कवि ने नवयुग की भावना-नारी के महत्व की प्रतिष्ठा को चरितार्थ ही नहीं किया, अपितु उसकी चरित्र-सृष्टि भी उतनी ही महान की है । परंपरागत राम काव्य से पृथक उर्मिला एवम् भरत के जीवन सूत्रों से कथावस्तु का युगानुरुप प्रासंगिक निर्माण वस्तुत: साहित्यिक इतिहास में एक अभिनव क्रान्ति है। इस नवीनता को यदि साकेत में प्रतिष्ठित आधुनिकता की आत्मा कहा जाय तो कुछ भी अनुचित न होगा । (5)

नारी के व्यक्तित्व की, उसके चारित्रिक गुणों और मानसिक वैशिष्ट्र्य की प्राय: आरंभ से अवहेलना ही होती आयी है। गुप्तजी की अपने युग से संपूणत: प्रभावित हुए थे । गुप्तजी के काव्य का आरंभिक विकास सुधारवादी आंदोलन का युग था । गुप्तजीने नारी की महत्ता को अपने साहित्य के माध्यम से सशक्त शब्दों में अभिव्यक्त किया । उन्होंने नारियों के प्रति होने वाले अन्यायों की ओर विशेष ध्यान दिया । तत्कालीन समाजमें नारी का जो अपमान एवम् तिरस्कार हो रहा था तथा उसके प्रति जो अनुदारता की भावाना दिखाई दे रही थी, इसके लिए कविने आक्रोश तथा क्रोध प्रकट किया है -

''हाय वधूने क्या वर-विषयक एक वासना पाई ?
नहीं और कोई क्या उसका पिता, पुत्र या भाई ?
नर के बाँटे क्या नारी की नग्न-मूर्ति ही आई ?
माँ, बेटी या बहन हाय ! क्या संग नहीं वह आई ?''(6)

मानव मस्तिष्क के सन्यास और वैराग्य को अधिक महत्व मिल जाने को नारी से विकार कहकर उसे अभिवांसित किया जाता है । भक्तिकालीन और रीतिकालीन अधिकांश कवियों ने जननी के विषयैषणा रुप का एकांगी प्रचार कर उसे विलास के निर्जीव उपकरण के रुप में निराद्रत किया है । किन्तु समग्रत:

भारतीय संस्कृति नारी के इस रुप का अनुमोदन नहीं करती । भारतीय नारी को अर्द्धाँगिनी का रुप मिला है-

"निज स्वामियों के कार्य में समभाग जो लेतीं न वे,
अनुराग पूर्वक योगजो उसमें सदा देतीं न वे ।
तो फिर कहातीं किस तरह अर्द्धांगिनी सुकुमारियाँ,
तात्पर्य यह -अनुरुप ही थीं नरवरों के नारियाँ ।"(7)

श्री मैथिलीशरण गुप्तजीके विचारानुसार इस अर्द्धाँगिनी के सहयोग और सहभोग बिना पुरुष के सभी कार्य अधूरे रहजाते हैं । अर्द्धाँगीत्व के बल पर ही सीता वन-गमन की अनुमति चाहती हैं ।

"मातृ-सिद्धि , पितृ-सत्य सभी, मुझ अर्द्धाँगिनी बिना अभी,
है अर्द्धाँग अधूरे ही, सिद्ध करो तो पूरे ही ।"(८)

यशोधरा भी इसी आधार पर गौतम की उपलब्धि में अपना अधिकार समझती हैं ।

''उसमे मेरा भी कुछ होगा, जो कुछ तुम पाओगे ।''(९)

मैथिलीशरण गुपत जी ने कहीं-कहीं नारी को दासी के रुपमें वर्गिन किया है किन्तु दासत्य की इस भावना का आधार बल न हो कर शिष्टाचार मात्र है । दासी का यह रुप पुरुषों के प्रति नारी की उस आदर-भावना का परिचारिक है जिस पर भारतीय संस्कृति और समाज व्यवस्थाका निर्माण हुआ है । गुप्तजीके अनुसार जहाँ नारी पुरुष की दासी है वहीं पुरुष नारी का दास है । लक्ष्मण अपने को उर्मिला का दास कहते हैं ।-

"किन्तु मैं भी तो तुम्हारा दास हूं ?"

'जयभारत ' में नारी विषयक अनेक समस्याओं को उठाया है । मंत्रणा को भोगते हुए भी वह रुढ़ियाँ तोड़ने का प्रयास करती है । और पुरुष के समान जीवन की आकांक्षिणी है । गुप्तजी की तीक्ष्ण द्रष्टि नारी के प्रति सामाजिक जीवन की भर्त्सन करने से नहीं चूकती-

''दो-दो कौर अन्न पालेंगी, और धोतियाँ चार,
नारी तेरा मूल्य यही तो, रखता है संसार ।

नारी अबला होते हुए भी संसार की व्यवस्था पुरुष के समान ही चला सकती है ।

माना कि अबला नारियाँ
होती सरज सुकुमारियाँ
पर वे चला सकतीं संसार क्या ?

विष्णुप्रिया में गुप्तजी राजनीतिक चेतना के फल स्वरुप विचारों में इतनी नवीनता का संचार करते हैं कि वे नर के अत्याचार के लिए नारी को विद्रोह की संस्तुति देने हैं ।

''नारी पर नरका कितना अत्याचार है ।
लगता है विद्रोह मात्र ही अब इसका प्रतिकार है ॥''

सेवा, करुणा, त्याग और क्षमा में नारी स्वभावत: ही पुरुष के लिए पथप्रदक्षिका रही है, किन्तु विडम्बना यह रही है वह प्रेरणामयी नारी समाज के द्वारा उत्पीड़ित और उपेक्षित रही है । गुप्तजी की द्रष्टि में

''नारी लेने नहीं, लोकमें देने ही आती है,
अश्रु शेष रखकर वर उसे प्रभु-पद घो जाती हैं ।[10]

नारी के प्रति इतने उच्च विचार रखनेवाले गुप्तजी के लिए अपनी लोकमंगल भावना और वैष्णव-भावना के प्रतिनिधि के रुप में नारी को चुनना स्वाभाविक ही था ।[11] नारियों के प्रति होनेवाले अन्यायों की और गुप्तजी अत्यधिक आकर्षित रहे और उनके मन में इस अन्याय के विरोध में एक क्रोध की भावना निर्माण हुई जो भविष्य में स्थायी बन गयी । उन्होंने अपने काव्य में उपेक्षित नारियों को एक श्रेष्ठ स्थान प्रदान किया । उन्होंने अपने साहित्य में शकुन्तला, कैकेयी, सीता, उर्मिला, मांडवी, यशोदा, विधृता, राधा, कुब्जा, सुन्नी, द्रोपदी,हिडिम्बा, देवकी, उत्तरा, विष्णुप्रिया और यशोधरा आदि नारियों को श्रेष्ठ स्थान प्रदान किया । प्रत्येक पात्र में नवीनता स्पष्ट होती है । इस विषयमें डा. सत्येन्द्रजी का कथन है- "गुप्तजीने स्त्रियों में भारतीय आदर्श के ढाँचे में दिव्यता भरने की चेष्टा की है । स्त्रियों का जो भारतीय आदर्श दीर्घकालीन परम्परा मुक्ति के कारण अनुदार और रुखा-सा दीखने लगा था और क्राँति के स्फूलिंगो को विस्फोटन के लिए प्रेरित कर रहा था, उसी को नये भावुक तर्क से सजावट, नई आत्मासे अभिसिंचित कर दिया है ।"[12]

अपने युग की सामाजिक समस्याओं के प्रति सजग और जीवन की सम्पूर्णता में आस्था रखनेवालें राष्ट्रकवि गुप्तजीने भारतीय नारीजीवन को कवि-भावना का कोमल संस्पर्श देकर अपनी स्वनाओं में प्रस्तुत किया है । फलत: उनके नारी-पात्र संवेद्य, भव्य और गरिमा मंडित हैं ।

गुप्तजी एक राष्ट्रकवि के रुपमें हमारे सामने उभर कर आते है । क्योंकि उनकी राष्ट्र के सभी अंगो पर समान रुप से द्रष्टि पड़ी है । उनके काव्य का भूल आदर्श और उद्देश्य लोकमंगल की भावना रहा है । अपने व्यापक काव्य-क्षेत्र में उन्होंने प्राचीन और नवीन, पौराणिक और सामजिक, ऐतिहासिक और काल्पनिक और विदेश के सभी प्रकार के काव्योंचित विषयो को ग्रहण किया है, पर वे कभी अपने युग को विस्तृत नहीं कर पाए, न काव्यादर्श को । गुप्तजी को हिन्दु संस्कृति से अनन्य प्रेम है परन्तु उन्होंने मुस्लिम, सिक्ख, ईसाई आदि सभी संस्कृतियों का भी गौरवगान किया है जो उनकी रचनाओं में देख सकते है । यह एक मानवतावादी द्रष्टिकोण का ही परिचय देता है। डा. राजेन्द्रप्रसादजी ने उनके अभिनंदन ग्रंथ में यह लिखा है - "आधुनिक काल में जिन साहित्य-सेवियोंने जन-साधारण में देश भक्ति की भावना उत्प्रेरित की हैं, उनमें कविवर मैथिलीशरण गुप्त प्रमुख है । उनकी ओजस्वी वाणीने भारत के गौरवपूर्ण अतीत का चित्र खींच कर और भारतवासियों को बीते युग की याद दिलाकर उन्हें आगे बढ़ने की प्रेरणा दी है ।"

वास्तवमें, गुप्तजी भारत-भारती के प्रकाशन से ही लोकप्रिय हो चुके थे । इस विषयमे आचार्य महावीर प्रसाद द्विवेदीजी ने उसी समय लिखा था- "यह काव्य वर्तमान हिन्दी साहित्यमें युगान्तर उत्पन्न करनेवाला है । वर्तमान और भावी कवियों के लिए वह आदर्श का काम देगा । यह सोते हुओं को जगानेवाला है, भूले हुओं को ठीक राह पर लाने वाला है, निरुद्योगियोंको उद्योगशील बनाने वाला है ! आत्म विस्तृतों की पूर्ण स्मृति दिलाने वाला है । निरुत्साहियों को उत्साहित करने वाला है । उदासीनों के हृदयों में उत्तेजना उत्पन्न करने वाला है । यह स्वदेश पर प्रेम उत्पन्न कर सकता है, यह सुख-समृद्धि और कल्याण की प्राप्ति में हमारा सहायक सिद्ध हो सकता है । इसमें वह संजीवनी शक्ति है जिसकी प्राप्ति हिन्दी में और किसी भी काव्य से नहीं हो सकती । इससे हम लोगों की मृतप्राय नसों में शक्ति का संचार हो सकता है, उनमें फिर सजीवता आ सकती है, क्योंकि हम क्या थे और अब क्या है, इसका मूर्तिमान चित्र इसमें देखने को मिल सकता है ।"[13]

गुप्तजी की कविताओं मे देश के वीरों का स्मरण किया गया, जिन्होंने स्वतंत्रता की रक्षा करने के लिए सर्वस्व बलिदान किया था - जैसे

"नीलांबर परिधात हरित पर सुन्दर है
सूर्य, चन्द्र युग मुकुट मेखला रत्नाकर है
नदियाँ प्रेम प्रवाह फूल तारे मण्डन है
बंदी जन खग-वृन्द शेष-फन सिंहासन है

करते अभिषेक पयोद हैं, बलिहारी इस वेष की।
हे मातृभूति ! तू सत्य ही सगुण मूर्ति सर्वेश की ।"[14]

गांधीवाद से प्रभावित अहिंसा और सत्य का जयघोष करने वाले जागरण - गीत भी भारत-भारती, मंगलघट, किसान आदि में विशेष रुप से मिलते हैं । सत्य और अहिंसा की नीति के साथ क्रान्ति और बलिदान के गीत स्वदेश - संगीत में मिलते है। भारत-भारती द्वारा देशकी वर्तमान अवनति, अधोगति को प्रस्तुत कर अपना क्षोम प्रकट किया है । किसानमें कृषकों की दयनीय और शोषित स्थिति का वर्णन कर के कविने इस वर्ग के प्रति देशकी सहानुभूति प्रकट की । नन्ददुलारे वाजपेयीजी ने लिखा है - "परन्तु युग के विकासोन्मुख जीवन का साक्षात्कार करने और उसे वाणी का परिधान पहनाकर नयनाभिराम बना देने के कारण इस युग में गुप्तजी जन समाज के प्रथम कृती कवि कहे जायें गे ।"[15]

आचार्य गुलाबाराय ने लिखा- "गुप्तजीकी कवितामें राष्ट्रीयता और गांधीवाद की प्रधानता है ।"[16] आ. रामचन्द्र शुकल ने भी यह स्वीकार किया है कि गुप्तजी की स्वनाओं में, सत्याग्रह, अहिंसा, मनुष्यत्यवाद, विश्व-प्रेम, किसानों और श्रमजीवियों के प्रति और समान-सबकी झलक हम पाते हैं ।[17] डा. सत्येन्द्रजी ने भी ठीकही लिखा है, "राष्ट्रयता गुप्तजी का उद्रेश्य है, पर संस्कृति-शून्य राष्ट्रीयता उन्हें ग्राह्य नहीं है ।"[18] डा. कमलाकान्त पाढकजी ने भी लिखा है, "उन्होने वर्तमान दुर्ववस्ता पर क्षोम प्रकट किया और उसके निमित्त स्वदेश-प्रेम के गीत गाये, जिसमें देशार्चान और स्वातंत्र्य प्रेमकी राष्ट्रवादी भावनाएं अथवा अहिंसक क्रांति की विचार धारा प्रकट हुई ।"[19] सन् 1936 में राष्ट्र-पिता महात्मा गांधीने गुप्तजीको 'राष्टकवि' की सर्वोच्य उपाधि से विभूषित किया इस ऐतिहासिक समान के लिए काशी में अत्यंत भव्य समारोह किया गया जिसमें महात्मा गांधीजीने घोषणा की कि "वे राष्ट्र के कवि हैं, उसी प्रकार जिस प्रकार राष्ट्र के बनाने से मैं महात्मा बन गया हूँ ।"[20]

राष्ट्रकवि का सबसे विशिष्ट गुण यह है कि वे पुराना होना नहीं जानते । उनकी चेतना का यंत्र सजीव है । वे कोई साढ वर्षो के लिखते रहे हैं । इस लम्बी अवधि में उन्होंने कभी भी दम नहीं मिला । इस बीच विश्व से बहकर जो भी विचार भारत पहुँचे उनका कुछ न कुछ प्रभाव उन पर अवश्य पड़ा है । इसबीच जो भी बड़ी घटनाएं घटीं, उनका कोई - न- कोई बिम्ब गुप्तजी के काव्य में अवश्य पहुंचा है । भारत -भारती से लेकर मृत्यु-पर्यन्त राष्ट्रीय भावों की गंगा को जन-जन के जीवन में बहाने का भगीरथ प्रवास किया है । हिन्दी के अन्य सभी कवियों की अपेक्षा मैथिलीशरण गुप्त की स्वनाओं में सर्वाधिक राष्ट्रीय चेतना एवम् राष्ट्रीय जागरणकी भावना विद्यमान है ।

गुरुदेव रवीन्द्रनाथ ठाकुर और सुब्रमण्यम भारती को छोड़कर किसी अन्य आधुनिक कविने इतनी लोकप्रियता प्राप्त की हो, इसमें संदेह है । मैथिलीशरणजी का रचना फलक इतना विस्तृत है कि कोई भी कवि उनकी समानता नहीं कर सकता । भारतीय राष्ट्रीयता और भारतीय संस्कृति के भूल आदर्शो की उन्होंने रक्षाकी है और उन्हें प्रचारित किया है । आज भी राष्ट्र-कवि के महत्व को सारे देश के कोने-कोने में जिस प्रकार अनुभव किया जा रहा है उससे यह स्पष्ट होता है कि राष्ट्रकविने भारतीय जनता के हृदयतंत्री तारों को कुछ ऐसा छु दिया है कि जबभी उसे संवेदना या सहानुभूति की आवश्यकता होती है, तो श्री मैथिलीशरण गुप्त की उक्तियों की आवश्यकता होती है, श्री गुप्तजी उक्तियाँ उसे यह विश्वास कर ''होगी सफलता क्यों नहीं, कर्तव्य पथ पर द्रढ़ रहों,'' आगे बढ़ने के लिए प्रेरित करती रहती हैं ।

मैथिलीशरण गुप्तजी मानवतादर्शवादी कवि अथवा उनके काव्य को सांस्कृतिक काव्य-सृष्टि कहना उपयुक्त होगा । वे आधुनिक काव्य की अंतर्वतिनी सांस्कृतिक प्रवृति के प्रवर्तक, परितोषक और पुरस्कर्ता कवि के रूपमें उपस्थित होते हैं । उन्हें युग विशेष या प्रवृत्ति विशेष के कवियों में परिगणित नहीं किया जा सकता ।[21] जय भारत में कति पय स्थलों पर राजनीतिक जीवन संबंधी विचार व्यक्त हुए हैं । कविने व्यक्ति स्वातंत्र्य और व्यक्ति के मौलिक अधिकारों की रक्षा पर बल दिया है । आज के युगमें प्रत्येक क्षेत्र में व्यक्ति को न्याय और अधिकार मिलने चाहिए । तभी उस राज्य को सुव्यवस्थित राज्य या प्रजातंत्र कहा जा सकता है । भारतीय संस्कृति के उत्कर्ष के साथ समसामयिक जीवन के चित्रण है । रंगभभूमि में परिक्षा के समय कृपाचार्य जब कर्ण से उसकी जातिया वर्ग के बारे में परिचय देने को कहते हैं, तब कर्ण मानव क्षमता को महत्व देता है, क्योंकि उसके आधार पर मनुष्य क पहचान होती है ।[22] गुप्तजीने युगजीवन की समसामयिक समस्याओं पर विचार करते हुए अपनी सामाजिक प्रतिबद्धता का परिचय देता है । युधिष्टठर मानव मात्र को एक ही परमात्मा का अंश मानते हुए समता संदेश देते हैं-

"सुनो तात, हम सभी एक है भवसागर के तीरा
हो शरीर- यात्रा में आगे पीछे का व्यवधान,
परमात्मा के अंश रुप हैं, आत्मा सभी समाना ! "[23]

उपस्तु जितनी सचेष्ट सामाजिक चेतना गुप्तजी के काव्य में अभिव्यक्त हुई है और उसे काव्यात्मक रुप देने का जैसा कवि-कर्म उन्होंने किया है, वह उन्हें जन-जीवन का कवि ही नहीं बनाती, हिन्दी में उनके विशिष्ट स्थान का भी प्रमाण देती है । जनता की चित्तवृत्तियों से गुप्तजी जितना साम्य स्थापित कर सके हैं, उतना आधुनिक साहित्यने अन्य किसी कवि के द्वारा संभव नहीं हुआ ।[24] गुप्तजी

का कतृत्य महान् है, उनकी सृजन-शक्ति अतुलनीय है तथा उनकी काव्य-प्रतिभा तथा कला-प्रेरणा अप्रतिहत है । उन्होंने विश्व मानवता का जीवनादर्श उपस्थित करते हुए भारतीय संस्कृति की व्यापकता, महत्ता और विशालता का हमें बोध कराया है । वे जितने उदार हैं उतने ही विनयशील । उनका संपूर्ण काव्य आशावादी ताल पर मुखरित हुआ है । जीवनास्था का ऐसा अपूर्व विनियोग अन्यत्र बहुत कम उपलवध होता है । वे पूर्ण वैष्णव हैं । वे जितने नीतिवादी हैं, उससे अधिक विश्व-बन्धुत्व के पोषक हैं । उनके काव्य को विशुद्ध भारतीय कहा जा सकता है । वे पवित्रता और मर्यादा के रक्षक हैं, तथा सामान्य जन-समूह के कवि भी हैं ।

प्रत्येंक कवि की काव्यभाषा पर उसके व्यक्तित्व की छाप होती है । कवि के व्यक्तित्व और काव्य-भाषा का विशिष्ट सम्बन्ध होता है । उसकी भाव-सीमा, कल्पना , शब्द-सीमा, भाषा- संग्रथन की एक निजी विशेषता होती है जो स्पष्ट आभास देती है ।[25] इन्हीं विशेषताओं के आधार पर कवि एक आदर्श की स्थापना करता है । क्योंकि "मानव को सदा आदर्श की आवश्यकता रही है । प्रत्येक विचारशील निर्माला अपने-अपने अनुकूल आदर्श की स्थापना किया करता है । गुप्तजी के जीवन में वह आदर्शराम है । मानवीय -चरित्र के सम्बन्ध में जितनी कल्पनाएं सम्भव हैं उन सबकी समष्टि राम का चरित्र है ।"[26] मैथिलीशरण गुप्तजीने तुलसीके बाद प्रथम वार अपने युग का प्रतिनिधित्य करते हुए लोक-भाषा खड़ी बोली के द्वारा राम में ईश्वर-तत्व की प्रतिष्ठा की ।

गुप्तजीने आदि से अंत तक भारतीय संस्कृति का गुणगान खड़ी बोली के ही माध्यम से किया है । गुप्तजी ने खड़ी बोली के माध्यम से राष्ट्रीय-चेतना को उदभासित कर जातीय-गौरव तथा स्वाभिमान की टेक को दृढ़ किया है । जाति को नवीन द्रष्टि तभी प्राप्त होती हैं जब उसके जातीय-संस्कारो की नवीन व्याख्या प्रस्तुत की जाती है । पुनरुत्थान के बाद भारतमें जो नवीन क्षितिज प्रकट हुआ है यह आवश्यकता थी कि कोई कवि का उस क्षितिज पर खड़ा होकर भारत के जातीय संस्कारों की नवीन व्याख्या प्रस्तुत करे । हिन्दी मे जिस बड़े पैमाने पर यह कार्य राष्ट्र-कवि मैथिलीशरण गुप्त जी ने किया वह सारे भारतीय साहित्य में बेजोड है ।[27] जनता की भावना को सही रुप में प्रकट करने के लिए जन-भाषा का मनन तथा प्रयोग करना पड़ता है । वे दोनों ही गुण गुप्तजीमें विद्यमान है । उनकी युग-चेतना विलक्षण है, जिसे वे अपने मध्य-युगीन संस्कारो और मानवोत्थानकारी आदर्शो से इस प्रकार समन्वित रखते हैं कि आश्चर्यान्ति होना पड़ता है । निश्चय ही वे युग के प्रमुख कवि है । जिनकी 'भारती'ने भारतीयता का संदेश वहन किया है । गुप्तजीने खडी बोली के माध्यम से उपेक्षिता नारियों को पावन स्मृति से अभिषिक्त किया । इस प्रकार गुप्तजी केवल खड़ी बोली की साहित्यक-चेतना को ही

जागृत करने वाले नहीं है, वरन भारत के उपेक्षित चैतन्य के चेता भी हैं । युग के समस्त जीवन-धारा को समेट गुप्तजीने मानो खड़ी बोली का अभिषेक किया । कलात्मक द्रष्टि से भले ही आलोचक उनमें कमियाँ खोजते रहें, "किन्तु उच्च कोटि के कलाकार शब्दों, छन्दों और मूर्त-अमूर्त चित्रों का खिलवाड़ नहीं करते, वे तो जनता को नई जीवन-शक्ति देते हैं । वे जनता की सामान्य मान्यताओं को नये मूल्य देकर उन्हें ऊपर उढाते हैं उनकी रचना में साहित्य कम हैं या अधिक उसकी चिन्ता उन्हें व्याकुल नहीं करती "[28] उनके द्वारा रचित खड़ीबोली की प्रारंभिक रचनाओं से भी समस्त हिन्दी-प्रदेश उद् बुद्ध और प्रेरित हुआ और तभी से गुप्तजी को लोकचित्त में राष्ट्र-पीति की भावना जगानेवाले सबसे शक्तिशाली कवि के रुप में हिन्दी-जगत् देखता आया है । राष्ट्रीय-चेतना को सबसे अधिक उभारने में मुखर-स्वर खड़ी बोली का रहा है और खड़ी बोली का उद्घोष पलागनवादी न होकर कर्मवादी रहा है । गुप्तजीका कवित्व-निर्झर नारी-प्रेम और वियोग के पर्वत से प्रसूत नहीं हुआ है, वह जो कुछ भी है उस सौन्दर्य की चट्टान से टकराकर प्रवाहित हुआ है जो बहिमुखी होकर मानव-कल्याण-साधन में तथा अन्तर्मुखी होकर भारतीय-संस्कृति की स्मपत्ति-स्वरूपा भक्ति के रुप में प्रकट होता है ।[29]

गुप्तजीने युग की आवाज को यथार्थवादी स्वरों में सुना । उनके काव्य में संघर्ष-मैत्री, हर्ष-विषाद तथा उत्थान-पतन के सजीव चित्रण है । युग-युगों से काव्य में उपेक्षित मानवता की करुण कराह को सुनकर गुप्तजीने उन्हें शाश्वत स्वरों से सम्बद्ध कर दिया । मानवता का यही चिरन्तन प्रवाह गुप्तजी की रचनाओं में परिलक्षिणी होता है । ''खड़ी बोली के कवियों में अब तक केवल श्री मैथिलीशरण गुप्त ही ऐसे हैं जिनके बारे में यह कहा जा सकता है कि जनता उन्हें पढ़ना चाहती है और यदि पाठ्य-क्रम से उन्हें निकाल भी दे तो भी जनता में वे पसन्द किये जायेंगे ।''[30] क्योंकि वे जन-मानस केसर्वाधिक निकट है ।

इस तरह गुप्तजीने जातीय भावना से लेकर धर्मो और संस्कृतियों के सामंजस्य तक को अपना काव्य-विषय बनाया है, शुद्ध आख्यानक रचना से लेकर व्यक्ति-वैचित्र्य-प्रदर्शन काव्य तक की रचना की है तथा उपदेशात्मक और सूक्ति-प्रधान रचना से लेकर भावात्मक और वैदग्धपूर्व-काव्य तक लिखा है । इसलिए प्रसादजी को मानवीय भावनाओं के कवि कहे जाते है और गुप्तजी को मानवता के कवि ।[31] डा. गोविन्द शेनाय की धारणा है कि हिन्दी साहित्य में जो स्थान गुप्तजी को प्राप्त हैं, वही स्थान ममलायम साहित्य में वल्लत्तोल नारायण मेनन को प्राप्त हैं ।[32]

उनका द्रष्टिकोण सदैव जनहितवादी रहा है । वे अधुनातन साहित्य में द्विवेदी-युगीन खेवे के सांस्कृतिक और नवोत्साहशील कवि के रुप में प्रसिद्ध हैं । उन्होंने महान् चरित्रों की लोक-सामान्य जीवन-चर्चा का वर्णन किया है , साधारण मानव-चरित्र में ईश्वरत्व की प्रतिष्ठा की है, नारीत्व की महत्ता

का उद्घोष किया है, नायिक प्रधान महाकाव्य रचा है और अखंडमानव-संस्कृति का जयगान गाया है। वे असंकीर्ण मनोवृत्ति के कवि हैं, जिन्हें देश और काल की सीमाएँ विकासशील बने रहने का निमंत्रण देती हैं । उन्होंने खडी बोली काव्य के राजपथ का निर्माण किया है, जिनकी पद्य-रचन के आधार पर अनेक परवर्ती कवियों का वाणी-संधा संभव हुआ है। गुप्तजी का हिन्दी जगत में सम्मानित स्थान और महत्व है। संक्षेप में, उनका काव्य उन्हें भारतीय जीवन की व्यापक संस्कृति के मूर्धन्य कवि के रुप में प्रतिष्ठित करता है ।